

श्रीस्वामी करपात्री जी

रामराज्यपरिषद् और अन्यदल

आज भारतवर्षमें रामराज्यपरिषद्के अतिरिक्त अन्य जितने भी राजनैतिक-दल हैं, वे सभी जाने बिनजाने कम्यूनिज्मके सिद्धान्तोंका अनुगमन कर रहे हैं। किन्तु कम्यूनिजम एवं सोशलिज्ममें ईश्वर, आत्मा एवं धर्मको कोई भी स्थान नहीं होता; अतएव इस वादके अनुयायी किसी शास्त्र या धर्मग्रन्थको नहीं मानते। मार्क्सवादी पुस्तकोंमें यह स्पष्ट है, कि "उत्पादन साधनोंमें रद्दोबदल होनेसे माली या आर्थिक हालतमें रद्दोबदल हो जाता है। अतएव सभी क़ानूनों, क़ायदों, नियमोंमें रद्दोबदल हो जाना उचित है। न्याय, सत्य, धर्म आदि सभी सामाजिक मान्यताओंमें रद्दोबदल होना अनिवार्य है।" इसीलिए समाजवादी या साम्यवादी (सोशलिस्ट या कम्यूनिस्ट) के लिए वेद, क़ुरान, बाइबिल आदि कोई भी धर्मशास्त्र मान्य नहीं होता। तभी वे व्यक्तिगत भूमि, सम्पत्ति, कल-कारखाने, व्यापार, उद्योग-धन्धोंका अपहरण करना उचित समझते हैं। अब कांग्रेसने भी सोशलिज्म अपना लक्ष्य घोषित किया है। फलस्वरूप तेजीके साथ वह राष्ट्रीकरणकी ओर बढ़ रही है। नेहरूकी प्रेरणासे कांग्रेस भी समाजवादी हो

गयी। कांग्रेसी एवं समाजवादी भी कहते हैं कि लोगोंकी जीवनोपयोगी व्यक्तिगत सम्पत्ति रह सकेगी। कोई ३० एकड़ एवं कोई १०० एकड़ तक भूमि तथा छोटे व्यापारों, कारखानोंका अस्तित्व मान लेते हैं। कोई इससे भी कम। परन्तु यह उनका सिद्धान्त नहीं; किन्तु परिस्थितिके अनुसार वे धीरे-धीरे आगे बढ़ना चाहते हैं। 'सूची प्रवेशे मुसलप्रवेशः'के अनुसार वे जैसे सूची धँसानेके बाद मूसल धँसाया जाता है वैसे पहले बड़ी-बड़ी भूमि सम्पत्तियोंको छीनकर अन्तमें सब कुछ छीनेंगे; क्योंकि उत्पादन-साधन एवं मुनाफ़ा कमानेका कोई भी साधन व्यक्तिगत न रखकर सरकारके हाथमें रखना, यही उनका अन्तिम ध्येय है।

समाजवादकी नयी व्याख्या

श्री नेहरू, मार्शल टीटो, गोमुल्का आदिका कहना है कि हमारा समाजवाद मार्क्स के समाजवाद से भिन्न है। हम मध्यममार्ग अपनायेंगे, जिसमें उत्पादन के बड़े-बड़े साधनोंका राष्ट्रीकरण भी होगा, साथ ही निजी उद्योग-धन्धे भी चालू रहेंगे। बड़े पैमाने पर भी उद्योग चालू किये जायेंगे, छोटे-छोटे कारखाने उद्योग भी। कुछ अंशों में विकेन्द्रीकरण भी रहेगा, और केन्द्रीकरण भी। परन्तु यह उन लोगों का सिद्धान्त युक्तिहीन है। वस्तुतः जिन तर्कों एवं युक्तियों से किसी मालिक की बड़ी भूमि, बड़ी सम्पत्ति, बड़े कारखानोंका राष्ट्रीकरण किया जायगा; उन्हीं युक्तियोंसे छोटी भूमि सम्पत्ति आदि उत्पादन-साधनों का भी राष्ट्रीकरण हो ही सकता है। यौक्तिक नियम, तर्कसंगत सिद्धान्त किसी पार्टी या सरकार की इच्छा पर निर्भर नहीं रह सकते। यदि इच्छापर ही निर्भर रहेगा, तब तो जब भी पार्टी या सरकार चाहेगी तभी छोटे कारखानों, भूमि, सम्पत्ति आदि का भी राष्ट्रीकरण हो ही जायगा। विश्वासार्थ नियम वही हो सकता है, जिसे मानने के लिए सरकार बाध्य हो।

शास्त्र-सिद्धान्तोंके अनुसार तो किसी मालिक की भूमि, सम्पत्ति, कल कारखाना आदि वैध वस्तुओं को मालिक की मर्जी बिना राजा या सरकार कोई भी नहीं छीन सकता। कांग्रेस धर्मनिरपेक्षता का नाटक रचती हुई भी रामकृष्ण के भक्तों की

गाढ़े पसीने की कमायी से देश में बौद्धधर्म का प्रचार कर रही है। फिर भी चोरी न करना, हिंसा न करना आदि बुद्ध के उपदेशों को ठुकरा रही है। गाय, बैल, बन्दर मोर आदि के मारने का भी षड्यंत्र चला रही है। बुद्ध के अनुसार किसी की कोई वस्तु जंगल या मार्ग में क्यों न पड़ी हो, उसकी मर्जी बिना ले लेना चोरी है। हिन्दू शास्त्र भी कहते हैं कि परान्न या परद्रव्य गृह में हो या मार्ग में, बिना दिये ग्रहण करना चोरी है। अतः उसे नहीं लेना चाहिए।

"परान्नं परद्रव्यं वा पथि वा यदि वा गृहे।
अदत्ते नैव गृह्णीयात् ।"

मन्वादि धर्मशास्त्र, दाय, क्रय, दान, पुरस्कार आदि द्वारा मिली हुई वस्तु पर व्यक्तियों का वैध स्वत्व मानते हैं। बाप-दादा की बपौती सम्पत्ति, भूमि आदि व्यक्ति का वैध स्वत्व सर्वमान्य सिद्धान्त है। जो वस्तु जिसकी नहीं होती है, उस सम्बन्ध में कहा जाता है, "क्या यह वस्तु तुम्हारे बाप की है।" अर्थात् जो वस्तु जिसके बाप की है वह तो उसकी वैध वस्तु मान्य होती ही है। जमीन्दारी-उन्मूलन कानून के नाम पर न केवल बड़ी-बड़ी भूमियों का ही राष्ट्रीकरण कर लिया गया; किन्तु किसी की निर्वाह लायक छोटी-छोटी भूमियाँ भी छीन ली गयीं। इनमें कोई मौरूसी भूमियाँ थीं, कोई खरीदी हुई, कोई दान में या इनाम में मिली हुई थीं। यह सब बुद्ध के अनुसार एवं प्राचीन वेदादिशास्त्रों के अनुसार चोरी ही है। जो बड़ी वस्तु की चोरी कर सकता है, वह छोटी वस्तु की भी चोरी कर सकता है। किसी को चुराना-न-चुराना चोर की इच्छा पर ही निर्भर है, उस पर कोई अंकुश नहीं। ऐसी पार्टियों द्वारा बनाया हुआ कानून तदनुसार होने वाले अदालती निर्णय भी सारहीन होते हैं। जो डाका डालनेवाला हो, वही लोकसभा में बैठकर कानून बनाये और वही अदालत में बैठ कर न्याय निर्णय दे तो उस व्यवस्था से जनता को उचित न्याय कहाँ तक मिल सकता है, यह विचारणीय है। व्यक्तिगत स्वतन्त्रता एवं व्यक्तिगत वैध सम्पत्ति बिना छीने भी शास्त्रानुसार बेकारी, बेरोजगारी दूर हो सकती है।

ऐसे लोग बेकारी, बेरोजगारी दूर करने के नाम पर काश्तकारों; मजदूरों की कंगाली दूर करने के नामपर, जनताको खुशहालबनाने के नाम पर, इस छीना झपटी को जायज सिद्ध करना चाहते हैं, परन्तु क्या किसी दानी, परोपकारी चोर की भी चोरी क्षम्य या धर्म हो सकती है ? सुना जाता है कि मानसिंह दस्युराज बड़ा ही परोपकारी एवं सदाचारी था, फिर वह क्यों दण्ड्य समझा जाता था ? वस्तुस्थिति तो यह है, कि राजाओं के राज्य छिनने पर भी जमींदारी जागीरदारी छिनने पर भी कुछ मुट्ठी भर सरकारी अधिकारियों उनके संबंधियों को छोड़ कर किसी की न कङ्गाली गयी है और न तो खुशहाली ही हुई। काश्तकार, मजदूर आज-भी पेट भरने को पूरी रोटी, तन ढँकने को उचित कपड़ा नहीं पा रहा है। लाखों कङ्गाल आज भी शहरों के सड़कों की पटरियों पर भूखे-नंगे चिथड़ों को लपेटे हुए पड़े हैं। पहले से भी देश की हालत बदतर हो रही है। जिन राजों, जमीन्दारों को कांग्रेसी, सोशलिस्ट तथा कम्यूनिस्ट शोषक कहते हैं, आज जनता उन्हीं को सस्नेह स्मरण करती हैं। एक भूतपूर्व रियासत में राष्ट्रपति साहबका जुलूस निकाला गया था। वहाँ के महाराज को इसलिए साथ नहीं रखा गया, कि जनता महाराजकी ही जय बोलेगी, राष्ट्रपति की नहीं। परन्तु भूलकर राजकुमार को राष्ट्रपति के साथ रहने दिया गया, परिणाम वही हुआ। राष्ट्रपति की जय न बोलकर जनता ने अपने महाराजा का ही जयघोष किया। कांग्रेसी फीके पड़ गये और राजकुमार को भी राष्ट्रपति के साथ से हटा दिया गया।

समराज्य के अनुसार राष्ट्र के नागरिकों का एक निर्धारित जीवनस्तर होता है, जिसमें प्रत्येक व्यक्तिको योग्यता एवं आवश्यकता के अनुसार भोजन, वस्त्र, शिक्षण, औषध तथा आवास (स्थान) की व्यवस्था होनी चाहिए और इसके लिए नागरिकों की एक न्यूनतम आय निर्धारित होती है। जिसे पूरा करना सरकार एवं जनता का परम कर्तव्य होता है। अन्यायियों, अत्याचारियोंके अवैध धन का अपहरण तथा जो पिता, पितामहादि की सम्पत्तियों के उत्तराधिकारी होकर उनके धार्मिक सामाजिक कर्तव्य होता है। अन्यायियों अत्याचारियों के अवैध धन का अपहरण तथा जो पिता, पितामहादि की सम्पत्तियों के उत्तराधिकारी होकर उनके

धार्मिक सामाजिक कर्तव्य-पालन से विमुख हैं, उन असाधुओं के धन का हरण करने तथा कर्तव्यनिष्ठ से धन संपन्नों से सहायता लेकर बेकारी, बेरोजगारी दूर कर दी जाती है। वैध पूँजी से होनेवाले आयों के भी अतिरिक्तांश के पांच भाग कर के दो भाग छोड़ कर तीन भागों को राष्ट्रहितार्थ, धर्म-यश आदि के नाम पर लगाने का नियम रहता है। इस अवस्था में बेकारी, बेरोजगारी तथा आर्थिक असंतुलन का भारतीय राजनीति के अनुसार अवकाश ही नहीं रहता। इस तरह बिना चोरी, बिना परवित्त हरण, बिना गुंडागर्दी किये भी भारतीय राजनीति के अनुसार सब सुव्यवस्था हो सकती है।

व्यक्तिगत वैध धन हरण रूपचौर्य के आधार पर सभी व्यक्ति निर्धन हो जायंगे। मुट्ठी भर तानाशाह पार्टीबाज मनमानी करेंगे, उन पर धर्म का ईश्वर का, शास्त्रका कोई भी अंकुश न होगा। फलस्वरूप जनता मोक्ष, धर्म, धन, सबसे वंचित होकर लोक, परलोकसे सर्वथा प्रच्युत हो जायगी।

नेहरूजी का समाजवाद

कहा जाता है कि जनतन्त्र में जनता ही अंकुश होती है। जनता निर्वाचन द्वारा अयोग्य शासकों या अयोग्य सरकारों को हटा सकती है, परन्तु जहां जनतन्त्र है, हो सकता है वहां यह बात कदाचित संभव भी हो, किन्तु व्यक्तिगत धन हरणके अनन्तर धनहीन जनता निर्वाचन में भी कैसे सफल हो सकेगी? नेहरूजी के समाजवाद की यह भी विचित्रता है कि जहाँ सभी समाजवाद के लिए वर्ग-संघर्षवर्ग-विद्वेष, वर्ग विध्वंस आवश्यक है, अर्थात् खूनीक्रान्ति के द्वारा मार्क्सीय समाजवादी परवित्त-हरण करते हैं, वहाँ नेहरू के समाजवाद में हिन्दू-विवाह-तलाक-उत्तराधिकार आदि कानूनों द्वारा पति-पत्नी, पिता-पुत्र, भाई-बहिन आदिमें फूट डालकर सबको विघटित कर उनकी भूमि, सम्पत्ति आदि को छीन लिया जाता है राजाओं को कुछ लाख सालाना का प्रलोभन देकर राज्य छीन लिया गया। कुछ मुआवजा देकर जमीन्दारी छीन ली गयी। जमीन्दारी उन्मूलन के नामपर ही छोटी भूमियाँ भी छीन ली गयीं। कुछ डरा धमका कर, कुछ कानून बनाकर, कुछ आर्डिनेन्स

लगाकर, कुछ जाल-फ़रेब के द्वारा व्यक्तिगत धन छीन लिया गया और कुछ थोड़े ही दिनों में छीन लिया जायगा। इस तरह वर्ग संघर्ष, खूनी क्रान्ति बिना भी सर्वस्व-हरण हो गया।

दूसरी विशेष नेहरूजी के समाजवाद की यह भी है कि जहां रूसी समाजवाद में प्रेसों, पत्रों की स्वाधीनता नहीं है, जनता को सरकार की समालोचना करने की छूट नहीं है, गैरसरकारी पार्टी को एलेक्शन लड़ने की छूट नहीं है, वहाँ नेहरू कहते हैं, 'हमारे समाजवाद में जनतन्त्र का पूर्णआदर है। हमें गाली दो, हमारे विरुद्ध प्रेस-पत्र चलाओ, नोटिस, पोस्टर निकालो- एलेक्शन लड़कर हमें हटा दो, नापसन्द सरकार बदल दो, मन चाही सरकार बना लो। जनता का ही राज्य है, जनता का सब कुछ है।' परन्तु जनता को धनहीन बनाकर कुछ कर सकने की स्थिति में हीनहीं रहने दिया जायगा। जैसे पक्षी का पंख काटकर उसे उड़ने की पूर्ण स्वाधीनता देने का कुछ अर्थ नहीं रह जाता। कांग्रेसी, सोशलिस्ट, कम्युनिस्ट आदि को एलेक्शन में भाग लेने का कोई तात्पर्य ही नहीं है।

सभी समाजवादी ग्रन्थों में निर्वाचन का हमखौल उड़ाया गया है। हां, कार्ल मार्क्स ने यह अवश्य कहा है कि जहाँ एलेक्शन चल जाता है, वहाँपर एलेक्शन द्वारा ही कम्युनिस्टों को शासन में प्रवेश करके समाजवाद बनाने का प्रयत्न करना चाहिए, पर समाजवादी सरकार बन जाने पर एलेक्शन का मार्क्सवाद में कोई भी स्थान नहीं है।

वस्तुतः, जहाँ जनता में व्यक्तिगत भूमि, सम्पत्ति आदि रहती है वहीं निर्वाचन लड़ने की क्षमता है। समाजवाद में व्यक्तिगत भूमि आदि का सिद्धान्त ही अमान्य है। फिर हाँ निर्वाचन आदि केवल नाममात्र ही रहता है।

जनसंघ और मार्क्सवाद

जनसंघी वैसे तो धर्म, संस्कृति तथा शास्त्र आदि की भी दुहाई देते हैं, परन्तु वे शास्त्रों एवं भारतीय धार्मिक संस्कारों से प्रभावित न होकर मार्क्सवाद से ही प्रभावित हैं और उनकी व्यावहारिक राजनीति भारतीय न होकर मार्क्सीय ही

है। मार्क्सवादियों के तुल्य ही वे भी अपने घोषणा-पत्रमें जमीन्दारी जागीरदारी उन्मूलन की प्रतिज्ञा कर चुके हैं। बड़े उद्योगों व्यापारों का राष्ट्रीकरण करना वे आवश्यक मानते हैं। भूमि को वे व्यक्तिगत न मानकर समाज की ही मानते हैं। 'सप्तवित्तागमाधर्म्या' इस मनु-वचन का या तो उन्हें ज्ञान ही नहीं, अथवा वे जान-बूझकर उसकी उपेक्षा करते हैं और वे भूमिका नये सिरे से वितरण करने की प्रतिज्ञा करते है। परन्तु यह सब सोशिलिस्टों या कौंग्रेसियों का अन्धानुकरण ही है, वे अपनी इन बातों की सिद्धि में कोई प्रमाण नहीं दे पाते, आखिर जब भूमि, संपत्ति व्यक्तिगत है ही नहीं तो उसके छीननेवाले व्यक्तियों को आज तक दण्ड क्यों दिया जाता है? क्या मिताक्षरा, व्यवहारमयूख वीरमित्रोदय आदि के कानून सर्वथा व्यर्थ ही हैं?

वस्तुतः पूर्वोक्त युक्तियों से ही यह सब चौर्य हैं। इस सम्बन्ध में कौंग्रेसी, जनसंघियों से कहीं अच्छे हैं कांग्रेस जमीन्दारी लेकर जमन्दारों को मुआवजा तथा क्षति पूर्ति देनेका विचार ही नहीं रखती है, किन्तु मुआवजा दे भी रही है, परन्तु जनसंघी कहते हैं जो जमींदार या जागीरदार दूसरे ढंग से निर्वाह कर सकते हैं उन्हें क्षतिपूर्ति नहीं दी जायगी। जो अन्यथा निर्वाह नहीं कर सकते, उनके ही पुनर्वास के लिए क्षति पूर्ति की जायगी। यह कहा ही जा चुका है कि जिस तक से बड़ी भूमि या सम्पत्ति छीनी जा सकती है, उसी तर्क से छोटी भूमि या सम्पत्ति छीनी जा सकती है। जैसे बड़ी चीज या छोटी चीजोंको उठाना न उठाना चोर की इच्छा पर ही निर्भर है, वैसे ही यदि कोई स्थायी आधार नहीं है, प्रमाण नहीं है तो वैयक्तिक सम्पत्ति के अपहरण में भी इच्छा ही प्रधान हुई। जनसंघ की इच्छानुसार ही किसी उद्योग-धन्धे का राष्ट्रीकरण किया जायगा। किसी का निजी रूप रखा जायगा। वस्तुतः, यह भी कांग्रेस का अन्धानुकरण ही होगा। कांग्रेसी समाजवाद के हरण रूप से हिचक कर या जनप्रकोप की सम्भावना से हिचक कर कुछ व्यापारों, उद्योगों तथा खेतों को निजी तौर पर भी चलाना चाहते हैं, व्यक्तिगत संपत्ति के कारण बेकारी की सम्भावना से हिचक कर राष्ट्रीकरण की बात करते हैं, और केन्द्रीयकरण एवं विकेन्द्रीयकरण के बीच के मार्ग का

अनुसरण करना ठीक समझते हैं। परन्तु वे नहीं जानते कि रामराज्य की राजनीति के अनुसार वैध धनहरण रूप चौर्य के बिना भी बेकारी, बेरोजगारी एवं आर्थिक असन्तुलन मिट सकता है। मिताक्षरा के अनुसार पिता भी मौरुसी (बपौती) भूमि, सम्पत्ति आदि का दान, वितरण या विक्रय नहीं कर सकता। यदि यह ऐसा करे तो कोई वकील चाहे तो उसकी स्त्री के पेटमें रहनेवाले बच्चे के नाम से उसपर मुकदमा लगाकर वितरणपत्र, विक्रयपत्र, या दानपत्र को अदालत द्वारा रद्द घोषित करा सकता है। जहाँ शास्त्रानुसार बाप को भी मौरुसी संपत्ति के बाँटने या बेचने का अधिकार नहीं है, वहाँ जनसंघी या कांग्रेसी को क्या हक है कि वह किसी को मौरुसी भूमि आदिको छीन या बाँट सके? यही स्थिति छोटे या बड़े उद्योगों, कारखानों के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है। किसी भी मालिक की वैध वस्तुको बिना उसकी मर्जी के ले लेना केवल चौर्य या डाका ही है। चोरी डाका या किसी तरह भी परवित्तहरण वैध नहीं हो सकता, वह सर्वथा आततायीपन है।

मार्क्सवादी, जो शास्त्र, धर्म और ईश्वर, सत्य, न्याय या प्राचीन नियमों को नहीं मानते, उनके लिए राष्ट्रीकरण सिद्धान्त चल सकता है। परन्तु जनसंघी तो संस्कृति, धर्म, शास्त्र या ऋषियों की दुहाई देते हैं, क्या वे सिद्ध कर सकते हैं कि चोरी बिना, आततायीपन बिना, वे किसी ऋषि या शास्त्र के बचनों से किसी के वैधधन, भूमि आदि का राष्ट्रीकरण कर मनमानी वितरण का समर्थन कर सकते हैं? भूमि समाज की है। समाज को किसी की व्यक्तिगत भूमि छीनने का अधिकार भी वे किसी राजनीतिक या धार्मिक आर्ष ग्रन्थों के आधार पर सिद्ध कर सकते हैं? इसीलिए तो मार्क्सवादी लेखक का कहना है कि जो ईश्वर, आत्मा धर्म या परलोक भी मानना चाहता है, साथ ही मार्क्स की समाजवाद की अर्थ-नीति को भी मानने की बात करता है, वह या तो मक्कार एवं धूर्त है, या तो महामूर्ख। ईश्वर, आत्मा, या धर्म की मानना और राष्ट्रीकरण के नाम पर वित्तहरण करना यह दोनों बात नहीं बन सकती। उसका यह भी कहना है कि ईश्वर दिखावटी हुण्डी नहीं है कि उसे मान लो। जो और उसके नियमों को न मानो। जो ईश्वर मानता है, तो उन्हें उसके नियमों को भी मानना पड़ेगा।

ईश्वरीय नियम उसके शास्त्रों से ही विदित होते हैं, पर विसहरण ईश्वरीय नियमों के विपरीत है ईश्वर मानना उसके शास्त्रों को ठुकराना शुद्ध दगाबाजी है. और केवल दूसरों को धोखा देने के लिए ही ईश्वर एवं धर्म का नाम लेना है।

आज की स्थिति विलक्षण ही है। कितने ही लाल टोपीवाले सोशलिस्ट एवं कम्युनिस्ट ईश्वर मानते हुए, धर्म मानते हुए सोशलिस्ट, कम्युनिस्ट बनते हैं। वेदपाठी हैं, रुद्राभिषेक भी करते हैं। ऊर्ध्वपुण्ड्रत्रिपुण्ड भी धारण करते हैं। कम्युनिस्टपार्टी की ओरसे उम्मीदवार भी होते हैं। कई तो केवल एलेक्शन जीतनेका 'चान्स' देखकर कम्युनिस्ट बन जाते हैं। कई लोग कांग्रेससे असन्तुष्ट होनेके कारण ही सोशलिस्ट हो रहे हैं. उन्हें सोशलिज्मसे कुछ भी सरोकार नहीं। वे सोशलिज्म अपनाते हुए भी अपनेको सोशलिस्ट नहीं समझते, इसीलिये वे धर्म संस्कृति का भी नाम लेते रहते हैं। आचार्य नरेन्द्रदेव जैसे सोशलिस्ट भी संस्कृतिका नाम लेते थे, धर्मकी बात करते थे। उन्होंने गत चुनावके समय अयोध्यामें कहा था कि 'समाजवादका उपदेश वैष्णवधर्म देता है।' परन्तु वस्तुस्थिति इससे सर्वथा भिन्न है।

"वास्तविक समाजवाद"

कहा जाता है कार्लमार्क्सके पहले ही फ्रांसमें समाजवाद प्रचलित था। सबके साथ समानता, स्वतन्त्रता, भ्रातृताका वर्ताव हो यह फ्रांसका नारा था, मार्क्स इससे बहुत प्रभावित हुआ और उसने फ्रांसीसी समाजवादका अध्ययन किया। पर उसने अन्तमें यह देखा कि यहाँ समानता, स्वतन्त्रता भ्रातृताका 'स्लोगन' तो है परन्तु तदनुसारी वर्ताव नहीं। कुछलोग अरबों सम्पत्तिके मालिक बने बैठे हैं, अधिकांश लोगोंको जीवन निर्वाह के लिए भी कोई साधन उपलब्ध नहीं है। कई घरों में लाखों सन्तरे सड़ते हैं, कहीं घरों में औषध के लिए भी सन्तरे नहीं हैं। कई जगह कपड़े सड़ रहे है, गरीबों को जाड़ाकाटने के लिए कम्बल भी नहीं मिलते। कई मालिको ने सैकड़ों टन गेहूँ समुद्र में फेकवा दिये, कई लोगों को छटाँक भर गेहूं का आटा इलाज के लिए भी नहीं मिलता। मार्क्स ने सोचा

कि यह तो समानता, मातृता आदि का नारा धोखा ही है बिना आर्थिक समानता हुए केवल सहानुभूति मात्रसे काम नहीं चल सकता। जब तक व्यक्तिगत सम्पत्ति का सिद्धान्त चलता है, तब तक आर्थिक विषमता बनी ही रहेगी। इसके अनुसार कोटिपति का पुत्र कोटिपति ही होगा, लक्षपति का पुत्र लक्षपति ही रहेगा, कौड़ीपति का पुत्र कौड़ीपति ही रहेगा। अमीर की सन्तान अमीर रहेगी, गरीब की सन्तान गरीब रहेगी। फलतः समानता का नारा सारहीन ही रहेगा। फलस्वरूप मार्क्स इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि व्यक्तिगत सम्पत्ति का सिद्धान्त समाप्त कर दिया जाय। सब भूमि, सम्पत्ति, कल कारखानों का राष्ट्रीकरण कर लिया जाय। सरकारी तौर पर सब उत्पादन हो सबके लिए उचित रूपमें उत्पन्न हुए पदार्थों का वितरण हो। फ्रांसीसी समाजवादी भी ऐसा सोचते थे सही, परन्तु उनके सामने ईश्वर एवं ईश्वरीय नियमोंके उल्लंघन का जटिल प्रश्न था। ईश्वरीय नियमों के अनुसार किसी की व्यक्तिगत भूमि, सम्पत्ति, कल-कारखानों का छीन लेना अन्याय, चोरी या डाका समझा जाता था। किसी मालिक की मिलकियत को उसकी बिना मर्जी के ले लेना चोरी समझी जाती थी और चोरी अपराध था इसी कारण उसके लिए दण्ड विधान था। चोरी गुण्डागर्दी रोकने तथा जनता के धन, धर्म एवं जान-माल की रक्षा के लिए ही राजा बादशाह या सरकारें बनायी जाती थीं। पिता, पितामह की भूमि सम्पत्ति, दायके नियमानुसार पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र की वैध सम्पत्ति मानी जाती थी। पुत्र-पौत्र आदि उसका मालिक होता था। इसी प्रकार ईमानदारी की कमायी तथा दान, पुरस्कार आदि द्वारा प्राप्त सम्पत्ति का भी व्यक्ति मालिक होता था। उस मालिक की किसी वस्तु को उसकी मर्जी बिना लेना प्राचीन अर्वाचीन धार्मिकों, राजनीतिकों सभी दृष्टि में पाप समझा जाता था।

उक्त नियम फ्रांस में ही नहीं संसार के सभी राष्ट्रों में प्रचलित थे तथा ईश्वरीय एवं आध्यात्मिक माने जाते थे। इनके विरुद्ध जाने की ताकत फ्राँसीसी समाजवादियों में न थी कार्लमार्क्सके सामने भी ये महत्वपूर्ण प्रश्न खड़े हुए। इसीलिए मार्क्स ने कहा कि कोई भी नियम सनातन नहीं हो सकता। धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक सभी नियमों का आधार भौतिक है, ईश्वर या आत्मा नहीं।

इसी प्रसंग में उसने ईश्वर एवं आत्मा का भी खण्डन किया और कहा कि जब ईश्वर ही नहीं एवं जीवित देह से भिन्न स्वतन्त्र आत्मा ही नहीं, तब ईश्वरीय आध्यात्मिक नियमोंका ही क्या महत्त्व ? उसने कहा कि जब कोई सनातन नियम ही नहीं है तो फिर पिता, पितामह की सम्पत्ति में या गाढ़े पसीने की कमायी तथा दान, पुरस्कार द्वारा प्राप्त सम्पत्ति में वैध स्वत्व होनेका ही नियम क्यों स्थिर रहेगा ? मार्क्स के अनुसार जो कभी न्याय होता है, वही कालान्तर में अन्याय हो जाता है। कभी का अन्याय ही कालान्तर में न्याय हो जाता है। अतः कभी जमीन्दारी, जागीरदारियों, अन्य बपौती या वैध सम्पत्तियों का छीनना भले ही अन्याय रहा हो, परन्तु वह आज न्याय ही है। उसने बताया कि सभी नियमों-सिद्धान्तों का आधार ईश्वर नहीं, आत्मा नहीं, शास्त्र नहीं किन्तु भौतिक आर्थिक अवस्था ही है। जब जैसी आर्थिक हालत होती है, तब वैसा नियम बनता है जब उत्पादन साधनों में उलटफेर होता है, तदनुसार ही माली हालत में भी उलटफेर होता है। तब उत्पन्न हुई वस्तुओं के वितरण सम्बन्धी नियमोंमें रद्दोबदल क्यों न हो ? इसी दृष्टि से ही उसने वर्ग संघर्ष द्वारा व्यक्तिगत भूमि, सम्पत्ति के हरण का औचित्य सिद्ध किया।

मार्क्सीय दृष्टि बिना अपनाये ईश्वरीय आध्यात्मिक एवं परम्परागत सनातन नियमों को मानते हुए कोई व्यक्तिगत सम्पत्ति के हरण या वितरण का औचित्य नहीं सिद्ध कर सकता। जो ईश्वर मानेगा शास्त्र मानेगा, परम्परा मानेगा, उसे तत्तद्नियम भी मानने पड़ेंगे। फिर परवित्तहरण चौर्य है, अन्याय एवं अनुचित है ही।

अग्निदो गरदश्चैवशस्त्रपाणिर्धनापहः ।
क्षेत्रदारापहर्ता च षडेते आततायिनः ।

अग्नि लगानेवाला विष देनेवाला वधार्थ शस्त्र लेनेवाला धन छीननेवाला ये छः प्रकार के आततायी माने गये हैं। आततायी वधार्ह माना जाता है।

आततायी बधार्हणः ।

जो चोरी. परधन हरण व्यक्ति के लिए दोष है वह राजा सरकार के लिए भी

दोष है। परवित्तहरण करनेवाली सरकार, सरकार नहीं, डाकुओं का गिरोह मात्र समझी जा सकती है। सरकार को दुष्टनिग्रह और शिष्टपालन का अधिकार है। दुष्टता, शिष्टता का निर्णय शास्त्रों और परम्पराओं के आधार पर होता है। अन्यायी, अपराधी को अर्थ दण्ड हो सकता है अवैध स्वत्ववाले व्यक्तियों का दण्ड के रूपमें अर्थहरण हो सकता है परन्तु किसी निरपराध व्यक्ति के वैध भूमि-धन आदि का हरण सरकार के लिए भी पाप ही है। -

बौद्धिक अराजकता

मार्क्स ने स्पष्ट रूपसे प्राचीन नियमों एवं शास्त्रों का विरोध उपस्थापित कर प्राचीन नियमों एवं शास्त्रों का खण्डन करके उन्हें अनावश्यक बतला कर राष्ट्रीकरण पक्ष का समर्थन किया; किन्तु कांग्रेसी या जनसंघी न उक्त विरोध ही समझते हैं न उनका समाधान ही करने का प्रयास करते हैं। केवल समाजवाद के राष्ट्रीकरण का अन्धानुकरण करते हैं। जनसंघी कहते हैं मंदिर सभी के लिये खोल दिये जाएंगे। स्पष्ट ही है कि जनसंघी शास्त्रों को नहीं मानते। जब वे शास्त्रोक्त वैध दायाधिकार नहीं मानते, चोरी को परवित्तहरण को पाप नहीं मानते तब उनके लिए शास्त्रीय अधिकार, अनधिकार का कोई महत्व ही नहीं है। किन्तु भारतीय संस्कृति, भारतीय धर्म में भारतीय शास्त्रों में अधिकार अनधिकार मूलक ही सारी व्यवस्था है। ब्राह्मण का अधिकार राजसूय में नहीं है, क्षत्रिय का अधिकार वाजपेय में नहीं है। शास्त्र प्रामाण्य बिना बाजार की मूर्ति में, अजायब घर की मूर्ति में मन्दिर की मूर्ति में कोई भी अन्तर नहीं। शास्त्र को छोड़कर प्रत्यक्ष अनुमान तथा साइन्स किसी भी प्रमाण से अजायबघर की मूर्ति और मन्दिर की मूर्ति में भेद नहीं सिद्ध होता। यदि भेद नहीं है, तब तो फिर मन्दिर में जाने का आग्रह भी व्यर्थ ही है। यदि शास्त्रानुसार कुछ भेद मान्य है, तब तो शास्त्रानुसार ही ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा अन्त्यजों का भेद एवं तदनुरूप व्यवहार भी मान्य होना चाहिए। जैसे ऊपर भेद न दीखने पर भी म्यूजम एवं मन्दिर की मूर्ति का भेद मान्य है, वैसे ही ब्राह्मण, क्षत्रियादि का भी शास्त्रानुसार भेद

मान्य होना ही चाहिये। जैसे पुत्री-पत्नी, भगिनी में कार्यकारण समता, समान होनेपर भी व्यवहार में भेद मान्य है, वैसे ही ब्राह्मणादि भेद भी मान्य है। क्षत्रिय पुत्रका ब्राह्मण पुत्री के साथ विवाह पाप है शूद्र पुत्रका ब्राह्मण पुत्री के साथ विवाह से चाण्डाल सन्तान उत्पन्न होती है। यदि ये सब भेद जनसंघियों को मान्य हैं, तो फिर मंदिर में सबका समानाधिकार कैसे ? मंदिर की शास्त्रोक्त मर्यादा की रक्षा भी हो और भक्तों को दर्शन भी यह व्यवस्था रामराज्यवादी चाहते हैं और करते भी हैं।

वस्तुतः इस सम्बन्ध में भी बिना सोचे विचारे संघियों ने सोशलिस्टों एवं कांग्रेसियों का अन्धानुकरण किया है। वे भूल जाते हैं कि सोशलिस्ट एवं कांग्रेसी शास्त्र परतन्त्र अपने को नहीं मानते किन्तु एक धर्मवादी, संस्कृतिवादी अपने आप को शास्त्र परतन्त्र मानेगा ही सोशलिस्ट ईश्वर नहीं मानता, उसके लिए मन्दिर और मूर्ति का कोई महत्त्व ही नहीं है। वे तो केवल रूढ़िवाद मिटाने के नाम पर मन्दिर प्रवेश का दुराग्रह करते हैं। उनका नारा भी यही है कि "मन्दिर में क्यों जाना है, रूढ़िवाद मिटाना है।" विवेक शून्य होकर संघी सोशलिस्ट का अन्धानुकारी साथी बनता है। जनसंघी यह भी अपने घोषणा-पत्र में घोषित करता है कि जनसंघ अस्पृश्यता को अपराध घोषित कर देगा। इस सम्बन्ध में भी वह कांग्रेस का अन्धानुकरण करता है। वास्तव में अपनी बुद्धि से संघी सोचते ही नहीं। उसके पास कुछ रामराज्य परिषद् की बातों का संग्रह है, कुछ कांग्रेस की बातों का, कुछ सोशलिस्ट कम्यूनिस्ट बातों का संग्रह है, उसकी अपनी बात ढूंढ़ो तो कुछ भी नहीं मिलेगी। संघी यह नहीं समझ पाता कि शास्त्रों के अनुसार अस्पृश्यता आदरणीय है, घृणामूलक अस्पृश्यता ही त्याज्य है। कोई स्त्री रजस्वला होने पर अस्पृश्य होती है, वह मन्दिर में नहीं जा सकती, रसोई गृह में नहीं जा सकती, यों भी उसका स्पर्श वर्ज्य है। कोई वैदिक आहिताग्नि महामहोपाध्याय भी जननाशौच एवं मरणाशौच में अस्पृश्य होता है, वह पूजा गृह में नहीं जा सकता, मन्दिर प्रवेश भी उसका वर्ज्य होगा। यहाँ अस्पृश्यता को अपराध घोषित करना मूर्खता ही है, जैसे शास्त्रानुसार उक्त अस्पृश्यता मान्य है, वैसे ही शास्त्रानुसार जन्मना अस्पृश्यता भी मान्य होनी ही चाहिये।

सब मनुष्य समान हैं, इसका अभिप्राय इतना ही है कि सबको रोटी, कपड़ा, इलाज, आवास स्थान उन्नति का मार्ग योग्यतानुसार मिलना चाहिए। यह नहीं कि शास्त्रोक्त अधिकार का उल्लंघन किया जाय, अनधिकार चेष्टा की जाय, वर्ण सांकर्य आश्रम सांकर्य फैलाया जाय। उपर्युक्त भेद धोने या साबुन लगाने से नहीं मिट सकता। कौटल्य ने भी वर्ण सांकर्य को राष्ट्र विध्वंसक कहा है। सती पुत्र और वेश्या पुत्र का भेद स्नान या साबुन लगाने से नहीं दूर होता। व्यभिचार आज भी दोष माना जाता है। रक्त शुद्धि का महत्व आज भी है। यदि मनुष्य मात्र समान माने जायँ तो भाई-बहन या पिता-पुत्री से पैदा होने वाले मनुष्य का भी शास्त्रोक्त सभी धर्मों में समानाधिकार मान्य होगा। यदि यही बात है तो फिर विवाहादि मर्यादा पालन करने की क्या आवश्यकता?

संस्कृति का प्रश्न

संघी अपनी घोषणा में यह भी कहते हैं कि देश में एक ही संस्कृति रहेगी। मुसलमानों को वह शुद्ध करके ब्राह्मणादि हिन्दू बना लेने के पक्ष में हैं। उसी मुसलमान को वे देश का नागरिक मानेंगे जो अपना नाम रामदास कृष्णदास आदि रखे। हिन्दू त्यौहार को मनाये, हिन्दू वेष-भूषा में रहे, अपने को हिन्दू कहे। जो मुसलमान यह मानने को तैयार नहीं उसे वे राष्ट्र में रहने न देंगे, न उसे नागरिकता के कोई अधिकार ही मिलेंगे। यही एक बात कांग्रेसियों से इनमें विलक्षण है। जहाँ वे मुस्लिम परस्ती को प्रश्रय देते हैं, वहीं ये मुस्लिम विरोध को प्रश्रय देते हैं। ये सज्जन यह नहीं जानते कि शास्त्रों में जन्मनावर्ण के आधार पर धर्म भेद का विधान है। जन्मना शूद्र, जन्मना वैश्य, जन्मना ब्राह्मण राजसूय नहीं कर सकता। राजसूय जन्मना क्षत्रिय एवं सम्राट् ही कर सकता है। कर्मणा सम्राट् कोई भले हो, कर्मणा क्षत्रिय राजसूय नहीं कर सकता। जन्मना शूद्र से ब्राह्मण कन्या में चांडाल की उत्पत्ति होती है। जन्मना ब्राह्मणपति गुण कर्म से ब्राह्मण वर मे कमी होने पर भी ब्राह्मणी पत्नी में ब्राह्मण ही सन्तान पैदा करेगा। जन्मना मुसलमान यदि कर्मणा ब्राह्मण बन कर एक जन्मना ब्राह्मण की कन्या के साथ शादी करेगा, तो वह संघियों को मान्य ही होगा, इस दृष्टि से संघियों की दृष्टि में सांगोपांग सभी

शास्त्र निरर्थक एवं अमान्य होंगे। धर्म से भिन्न संस्कृति भी संघी सिद्ध नहीं कर सकते, फिर अन्य धर्म, अन्य संस्कृति माननेवाले अन्य संस्कृति या धर्म मानने के लिए किस तरह बाध्य किये जा सकते हैं? और फिर इसी तरह पाकिस्तान या इङ्गलैण्ड के हिन्दुओं को भी इस्लामी या ईसाई संस्कृति मानने के लिए बाध्य किया जायगा, तो संघी क्या उपाय करें?

संघी कहते हैं जाति के आधार पर भेद व्यवहार नहीं होना चाहिये इसलिए वे खान-पान में भेद नहीं करते। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, अन्त्यज सब बैठकर एक साथ एक थाली में खाते हैं। स्पष्ट है कि यदि रोटी में परहेज नहीं, जाति-भेद मान्य नहीं, जाति-भेद मूलक वर्ण व्यवस्था मान्य नहीं। तब फिर विवाह में भी भेद क्यों होगा? फिर भी मनमाने विवाह भी होंगे, फिर जनसंघ द्वारा भी वही वर्णसंकरी सृष्टि फैलेगी जो कांग्रेसियों द्वारा फैल रही है। फिर, हिन्दू कोडबिल का विरोध क्यों? बिना बायबिल के ईसाई क्या हैं? बिना कुरान की इस्लामियत क्या है? बिना वेद, रामायण, भागवत के हिन्दुत्व क्या है? इस तरह संघ का घोषणा-पत्र न हिन्दुत्व के ही अनुकूल है न उनकी राष्ट्रियता के ही। न वह आस्तिकों के ही अनुकूल है न नास्तिक समाजवादी कांग्रेसियों के ही।

जनसंघी सुपुष्ट जनतांत्रिक शासन बनाना चाहते हैं। परन्तु यदि शास्त्र एवं धर्मनिरपेक्ष जनतन्त्र चाहते हैं, तब मुस्लिम विरोध को कहाँ स्थान रहेगा? यदि हिन्दुत्वानुरोधी तथाकथित राष्ट्र मान्य हैं, तब जनतन्त्र कैसे? फिर तो हिन्दुत्व तंत्र ही कहना चाहिए। हिन्दूसभा की भी रीति नीति प्रायः यही है। हिंदू सभा स्पष्ट अपने को हिंदू संस्था कहती हैं। परंतु जनसंघी भारतीय नाम रखते हैं। ये जनसंघी मुसलमानों को भी संघ में मिलाने की घोषणा करते हैं, हिंदू सभाई ऐसा करने में कुछ लज्जित होते हैं। अन्यथा शास्त्र, धर्म आदि के सम्बंध में मन-मानी दोनों की एक-सी ही है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि देश में जितने राजनीतिक दल कार्य कर रहे हैं वे न तो स्वयं में स्पष्ट हैं न जनता के सामने। लक्ष्य कुछ है और व्यवहार कुछ। इसका फल यह हो रहा है कि देश में राजनीतिक स्थिरता और विश्वास नहीं

हो पा रहा है। नयी-नयी व्यवस्थाएँ सुनने को मिलती हैं। झूठे प्रलोभन देकर वोट प्राप्त करना ही राजनीति का लक्ष्य हो गया है। इस निम्न कोटि की स्थिति से ऊपर उठाकर स्वस्थ राजनीतिक विचारों को व्यवहार रूप में लाना ही रामराज्य परिषद् का लक्ष्य है परिषद् अपने साधन तथा लक्ष्य में स्पष्ट है। न किसी प्रकार का धोखा है न प्रलोभन। प्रचार के लोभ में वह किसी को धोखा नहीं देना चाहती। उसका एकमात्र लक्ष्य है पक्षपात विहीन धर्म सापेक्ष राजनीति को स्थापना। अतएव जो लोग इस विचारधारा से सहमत हों उनका कर्तव्य है कि तत्काल परिषद् की स्थापना में लग जायं।

विनाशकाले विपरीत बुद्धि:

सामान्यतया संसार के सभी प्राणी आत्मरक्षा के लिए भरसक प्रयत्न करते हैं। व्यावहारिक कहावत है कि लड़कर मरना अच्छा सड़कर जीना अच्छा नहीं। गुलामी मनोवृत्ति का यही नमूना है कि जो भी शासक हो चाहे योग्य चाहे अयोग्य बड़े आदमी कहे जानेवाले लोग उसी के साथी होते हैं। भारत के देशी राजा, तालुकेदार, जमींदार, जागीरदार, पूँजीपति, मठाधीश, महन्त, मण्डलेश्वर सभी सरकारी पक्ष में रहने से ही अपना हित समझते हैं। अंग्रेजी राज्य के समय यह सभी अंग्रेजों के साथ रहे, कांग्रेसी राज्य में कांग्रेस के साथ इन्हें किसी शास्त्र या सिद्धांत से कुछ भी प्रयोजन नहीं। इनकी इन्हीं कमजोरियों से अंग्रेजों ने फायदा उठाया। जब जिसे चाहा कान पकड़ कर गद्दी से उतार दिया, जब चाहा जिसे धमका दिया, जब चाहा किसी को कुछ पुचकार दिया। इसी कमजोरी से कांग्रेसियों ने फायदा उठाया। देखते-देखते हजारों राजाओं को खत्म कर दिया; किसी को चूँ भी करने की हिम्मत नहीं पड़ी। भेड़िया के सामने जो गति बकरे की होती है वही 'राजा' कहे जानेवाले लोगों की हुई। जमींदारों, जागीरदारों ने कुछ चीं चपड़ किया परंतु अन्त में ठण्डे हो गये। सब मिलकर पचीसों दैनिक अखबार निकाल सकते थे, ईमानदार एवं सदाचारी होकर जनमत अपने अनुकूल बना सकते थे, परन्तु उनसे कुछ भी न हुआ।

पूंजीपति भी अंग्रेजों के समय उनकी पूजा करते थे, डाली सजाते थे, कांग्रेस को गाली देते थे। आज वे सब कांग्रेस के भक्त हो गये हैं। यद्यपि कांग्रेस ने समाजवाद अपना लक्ष्य घोषित कर दिया है और समाजवाद का स्पष्ट अर्थ है कि व्यक्तिगत भूमि, सम्पत्ति, कल-कारखानों उद्योग-धन्धों को छीन कर राष्ट्रीकरण कर लिया जाय और शनैः शनैः वही हो भी रहा है। दस-दस एकड़ भूमि वालों, जमींन्दारों, जागीरदारों (जिनका दुर्भाग्य से 'जमीन्दार' नाम पड़ा है) की भी भूमि छिन गई। जिन्हों ने दूसरों का गला नहीं काटा, अपने बाप दादा की दस एकड़ भूमि पायी, जिन्होंने गाढ़े पसीने की कमायी से खरीदी, जिन्होंने दान में या देश की इज्जत बचाने या बहनों की इज्जत बचाने में सिर कटाया, उनकी बहादुरी के फलस्वरूप उनके बेटों पोतों को पुरस्कार के रूप में दश एकड़ भूमि मिली है, उन सबकी भूमि छिन गयी। चकबन्दी के चक्कर में किसानों की काश्तकारियाँ भी छिन रही हैं। मकानदारों के मकान भी छिन रहे हैं। बड़ी-बड़ी जीवन बीमा कम्पनी जैसी कम्पनियाँ कल कारखाने भी छिन गये। फिर भी पूँजीपति कांग्रेस की पूजा करके आत्मरक्षा की वैसी ही आशा कर रहा है, जैसे चूहा बिल्ले को साष्टांगदण्डवत करके आत्मरक्षा की आशा करे। जो पूँजीपति कल तक धर्मध्वजी बनकर धर्म का ढोंग धतूरा रचता था, गोहत्या बन्द कराने एवं हिन्दूकोड, हिन्दू विवाह तलाक बिल हिन्दू उत्तराधिकार दत्तक आदि कानूनों के रोकने के लिये चिल्लाहट मचाता था और इन कामों के लिये कुछ रूपया भी खर्च करता था, वही गोहत्या जारी रखने वाली कांग्रेस को करोड़ों रूपयों देकर इलेक्शन जिताने के लिये प्रयत्न करता है। जब हिन्दूकोड नहीं बना था तब हिंदूकोड के विरोधी थे। अब बन जाने पर हिंदूकोड बनाने वालों के वही पूंजीपति साथी हो गये हैं। स्पष्ट है कि आज कांग्रेस का साथ देना, रुपये देना वोट देना, गोहत्या में भागीदारी होना है। हिन्दूविवाह तलाक आदि कानूनों के द्वारा स्पष्ट रूपमें सबको मनमानी वर्णाश्रमधर्म विरुद्ध प्रतिलोम विवाह (ब्राह्मण, राजपूत, वैश्य तथा चमार भंगी आदि का परस्पर जाति-पांति की परवाह न करके शादी) का विधान कर दिया गया। मनमानी पति पत्नी में विवाह विच्छेद आदि का प्रचलन करके स्पष्ट ही धर्म एवं शास्त्रों की हत्या की गयी है। कांग्रेस को सहायता देनेवाले पूंजीपति धर्मघात एवं शास्त्रघात में भागीदार हो रहे हैं।

कितने ही पूंजीपति ऊर्ध्वपुण्ड्रत्रिपुण्ड्र कंठीमाला धारण करते हैं, कथा सुनते हैं, कीर्तन कराते हैं, मन्दिर बनाते हैं, मन्दिर की पूजा करते हैं. हरिजन मन्दिर प्रवेश पाप समझते हैं; परन्तु सब जगह के मन्दिरों की मर्यादा को तोड़ने वाले मन्दिरों की सम्पत्ति छीननेवाले कांग्रेसियों को रुपये तथा वोट देकर मन्दिर मर्यादा तोड़ने एवं मन्दिरसम्पत्ति छीनने के पापके भी भागीदार बन रहे हैं। कांग्रेसी सरकार इन्हीं की मदद से इलेक्शन जीत कर गरीबों को छोटी-छोटी भूमि सम्पत्तियां भी छीन रही है। गरीबों के छोटे-छोटे व्यापारों को भी छीन रही है। काश्तकारों की काश्तकारी भी छीन रही है। इन सब पापोंके भागीदार भी यही पूंजीपति होंगे और अन्तमें इन्हें आत्मघात का भागीदार होना पड़ेगा। चूहों का सरदार जब तक अन्यचूहों को फंसाकर लाता रहेगा तब तक दंडवत् प्रणाम करने से बचा रहेगा। अन्त में बिल्ला उसे भी अवश्य खायेगा। इस तरह आज पूंजीपति ही देशके गोधन के नाशका, धर्म एवं शास्त्र के नाशका, मन्दिर मर्यादा के नाशका अपने धन एवं गरीबों की भूमि सम्पत्ति के नाशका कारण बन रहा है। यह समझता है कि कम्यूनिस्टों एवं सोशलिस्टों से कांग्रेसी अच्छा है; परन्तु वह नहीं समझता कि अब लोकमान्य सुरेन्द्रनाथ बनर्जी गांधी की कांग्रेस नहीं है, यह तो नेहरू की समाजवादी कांग्रेस है। इससे कम्यूनिस्टपार्टी में इतना ही भेद है कि यह धर्मका नाम भी लेती जायगी, व्यक्तिगत सम्पत्ति की बात भी करती जायगी, व्यक्तिगत उद्योगों व्यापारों का नाम लेती रहेगी किन्तु शीघ्रातिशीघ्र सबका विनाश कर देगी। दूर नहीं निकट भविष्य में ही किसीके घरमें भूनी भांग भी रहना सम्भव न होगा। यह जनतन्त्र नामपर जनतन्त्र की हत्या करके लेनिन के अनुसार सर्वहारी के नाम पर मुट्ठी भर गुण्डों का डिक्टेटरशिप स्थापित करनेपर तुली है। सबको धनहीन बनाकर किसी को भी एलेक्शन लड़ने लायक न रख कर पंख काटकर पक्षीको उड़ने की स्वतन्त्रता के तुल्य सबको नापसन्द सरकार बदलने और मनचाही सरकार बनाने की छूट दे रही है। एक मात्र रामराज्य परिषद् ही सिद्धान्त रूपसे शास्त्रतक एवं लोकसिद्ध न्याय के आधार पर कांग्रेस के इन कालेकारनामो का विरोध कर रही है और सर्वविध साधनहीन होनेपर भी कांग्रेस का मुकाबिला कर रही है पूंजीपति समझते हैं कि रामराज्य परिषद् कुछ कर नहीं सकती, इसलिये कांग्रेस का ही साथ देना ठीक है। इसका

स्पष्ट अर्थ है आत्मरक्षा का प्रयत्न नहीं हो सकता, तो आत्मनाश का ही प्रयत्न करना अच्छा है। किसी भी समाजवादी ग्रन्थ को उठाकर पढ़िए। स्पष्ट रूप से पायेंगे कि पूँजीवाद के विनष्ट हुए विना समाजवाद बन ही नहीं सकता। जैसे बिल्ली का चूहा भोजन है वैसे ही समाजवाद का पूँजीवाद भोजन है। पूँजीवाद के विनाश बिना समाजवाद टिक ही नहीं सकता। आम तौर पर जनता धार्मिक है, अपने धन एवं धर्म की रक्षा चाहती, उसे यह पसन्द नहीं है कि उसके समाज में वर्ण संकरी सृष्टि हो। जनता नहीं चाहती कि चमार, राजपूत, भंगी, ब्राह्मण की आपस में शादी हो। जनता राजपूत के लड़केसे ब्राह्मण कन्या की शादी को पाप समझती है। जनता गोहत्या को पाप समझती है, जनता मन्दिर मर्यादा के मिटने को भी पाप समझती है, जनता यह भी नहीं चाहती कि उनकी बपौती मिल्कियत छीन जाय। गाढ़े पसीने की कमाई, दान में इनाम में मिली चीज छीन जाय। जनता इसे गुण्डागर्दी और पाप समझती है। जनता ऐसी सरकार बनाने में मदद करनेवाले पूँजीपतियों को अपना सीधा दुश्मन समझती हैं। केवल जनता के कानों में रामराज्य की आवाज पहुँचने की देरी है, जनता सर्वथा रामराज्य के सिद्धान्त की है। पूँजीपति न चेतेंगे तो आत्म-हत्या जी पृष्ठभूमि तैयार करके नष्ट हो जायेंगे। न श्रोष्यसि विनङ्क्ष्यसि।

राजा-रईस एवं मठाधीश

इसी तरह राजा रईस भी अभी चाहें, तो उनके पास सामग्री कुछ न कुछ अब भी है। रामराज्य के सिद्धान्त का अनुसरण करके प्रचलित गुण्डागर्दी पर कुछ ब्रेक लगा सकते हैं। मठाधीश महन्त मंडलेश्वर भी आज अधिकाधिक सरकारी चापलूस बन रहे हैं। वे निरन्तर माई बाप सरकार का गुणगान कर रहे हैं, चेले चेलियोंके फिराक में भटक रहे हैं। सरकारी साधु समाज में भरती हो रहे हैं। इससे उनका तो कुछ लाभ होगा नहीं हाँ जैसे वृक्षांश काष्ठदंड की सहायता से कुल्हाड़ी द्वारा वृक्षों का विनाश होता है वैसे ही इनकी सहायता से धर्म एवं साधु समाज का विनाश हो सकता है। केवल मठ-मन्दिरों की मर्यादा भ्रष्ट करने में; सम्पत्ति नष्ट करने में धर्म एवं शास्त्र नाश में कांग्रेस इन साधुओं का प्रयोग कर रही है। सुना है बाम्बे में सरकारी साधु समाज ने प्रस्ताव स्वीकृत किया है कि 'हम लोग गोहत्या बन्दी आन्दोलन का समर्थन नहीं कर सकते क्योंकि गोहत्या बन्दी आन्दोलन को प्रारम्भ करनेवालों से साधु समाज को ठेस

पहुँचा है।' यदि गोहत्या बन्दी आन्दोलन से, मन्दिर-मर्यादा रक्षा आन्दोलन धर्म हत्या बन्दी आन्दोलन से साधु समाज को ठेस पहुंचता है तो फिर साधु-समाज की विशेषता का कहना ही क्या?

धर्म एवं राजनीति

आजकल कहा जाता है कि साधुओं को केवल पूजा और पाठ, कथा-वार्ता करनी चाहिए राजनीति के झगड़े में नहीं पड़ना चाहिए। कितने ही कांग्रेसी भी ज्ञान और भक्ति की चर्चा करने साधुओं के पास पहुंचते हैं। वैकुंठ भी जाना चाहते हैं, साथ ही यह भी चाहते हैं कि उनके मनमानी आचरण करने एवं परधन हरण में कोई बाधा न होनी चाहिए। यद्यपि समाजवाद और आध्यात्म-वाद में प्रत्यक्ष विरोध है। ईश्वर, आत्मा और धर्म मानने पर तो कोई न कोई शास्त्र एवं नियम मानना ही पड़ता है। धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक नियम भी मानने पड़ते हैं और फिर मनमाने आचरण एवं परधन परभूमि हरण भी नहीं चल सकता। इसीलिए धर्म एवं शास्त्र की हत्या का प्रयत्न करते हुए धर्म से और जप से वैकुंठ पाने की आशा रखनी मूर्खता है। कोई आम्र का फल चाहे आम्र की जड़ काटे यह मूर्खता है और गोदुग्ध चाहे गोवध का प्रयत्न करे तो यह मूर्खता है। उसी तरह धर्म फल चाहे धर्म से बैर बाधे। धर्म का अना-दर करे, धर्मबोधक शास्त्र को ठुकराये तो यह भी मूर्खता ही है। भगवान् का भजन करे कीर्तन करे भगवान् के शास्त्रों का विनाश आंखों देखे यह असङ्गत है। कोई अध्यात्मवादी बने, अध्यात्म विरोधी समाजवाद के शरणागत होना चाहे, यह मूर्खता है। राजनीति कोई अजीब चीज नहीं है। जहाँ सरकारों द्वारा धर्म धन एवं शास्त्रों का विनाश हो रहा हो, वहाँ धार्मिक राज्य बनाने के लिए प्रयत्न करना आवश्यक है। स्पष्ट है कि जब रावण राज्य में गौ ब्राह्मण का वध होता था शास्त्र एवं सभ्यता नष्ट होती थी, तो उसे मिटाने के लिए देवताओं ऋषियों एवं आस्तिकों ने बल लगाया। राम आये और रामराज्य बना, तभी शान्ति हुई। लौकिक पारलौकिक उन्नति का मार्ग प्रशस्त हुआ। शास्त्र कहते हैं 'मज्जेत्त्रयी दण्डनीतौ हतायाम्' राजनीति के नष्ट हो जाने पर वेद एवं वेदोक्त धर्म संकट में पड़ जाता है। आन्वीक्षिकी (वेदान्त विद्या) त्रयी (वेदादि-प्रोक्त धर्म विद्या) वार्ता (कृषि गोरक्षा वाणिज्य विद्या) ये लौकिक पारलौकिक उन्नति

का साधन होने से सती (समीचीना) विद्या हैं। परन्तु दण्डनीति के विप्लव या विभ्रम होने से उपर्युक्त तीनों ही विद्याएं असती (अकिंचित कर) हो जाती हैं।

आन्वीक्षि की त्रयी वार्ता सतीर्विद्याः प्रवर्त्तते।
सत्योपिहि न सत्यस्ता दण्डनीतेस्तु विभ्रमे॥

इस दृष्टि से माता-पिता-गुरुजनों का विनाश देखना हाथ पर हाथ धरे बैठ रहना, माला जपने और बैकुण्ठ प्राप्त करने की बात करनी मूर्खता है। इसी तरह राजनीतिक कांग्रेस आदि पार्टियों की सरकारों के द्वारा, धन धर्म का विनाश देखना शास्त्र एवं तदुक्त मर्यादाओं का विध्वंस देखना और उन्हीं विध्वंसकों के टुकड़ों एवं प्रसाद की आशा रखनी अति मूर्खता है। मन्दिरों की मर्यादाओं का विध्वंस देखते हुए भी विध्वंसकों का साथी बनना या चुप रहना वैसा ही पाप है, जैसे माँ बहन बेटियों की इज्जत लुटते हुए देखना और लूटने वालों का ही साथ देना या चुपचाप बैठे रहना।

'यश्च स्थापयितुं शक्तोनैव कुर्याद्धि मोहितः।
तस्य हन्ता न पापीयानिति वेदान्त निर्णयः॥'

जो धर्म विरोधियों का प्रतिरोधन कर धर्म मर्यादा स्थापना करने में समर्थ होकर भी प्रयत्न नहीं करता या प्रयत्न करने वालों का साथ नहीं देता वह दण्ड्य है और उसके दण्डयिता को कुछ भी पाप नहीं होता।

किन्तु जो समर्थ न होने पर भी इन कार्यों के लिए प्रयत्नशील होता है अपना कर्तव्य पालन करता है, वह इन सब पापों से मुक्त होकर सम्यक् ज्ञान का भागी होता है।

यः स्थापयितुमुद्युक्तः श्रद्धयैवाक्षमोऽपि सन्।
सर्व पापविनिर्मुक्तः सम्यक् ज्ञानमवाप्नुयात्॥

ऐसे धार्मिक भक्त या साधु जो धर्म का नाम लेकर, बैकुण्ठ पहुँचाने का नाम लेकर धर्मविध्वंसक सरकार के पिट्ठू होकर धर्म एवं शास्त्र के नाश में हेतु बन रहे हैं, वे वस्तुतः ईश्वर, धर्म एवं जनता के दुश्मन हैं। जनता को शीघ्रतिशीघ्र ऐसे लोगो से सावधान हो जाना चाहिए। ऐसे लोग स्वयं नरक के कीड़े हैं। फिर इनके द्वारा ईश्वर भक्ति एवं बैकुण्ठ या ब्रह्म प्राप्ति की आशा करनी अपने आपको धोखे में डालना है। जो रोटी के टुकड़े एवं कुछ चाँदी के टुकड़ों या प्रतिष्ठा के लिए धर्म एवं शास्त्र विरोधियों का प्रशंसक साथी एवं सहायक बन सकता है, उसके द्वारा ब्रह्म या बैकुण्ठ की आशा करनी खपुष्प पाने की आशा करनी है।

ऐसे ही लोग कभी कभी (कुछ साधु एवं कुछ धार्मिक या भक्त कहे जाने वाले लोग) कहने लगते हैं, कि हम तो तटस्थ हैं। सभी राजनीतिक पार्टियों को समान दृष्टि से ही देखते हैं ऐसे लोग कभी 'रामाय स्वस्ति' कभी रावणाय स्वस्ति' की बात करते हैं। कहना न होगा तटस्थता का दम्भ एवं मूर्खता अपनी कायरता छिपाने के लिए ही है। स्पष्ट है जहाँ राम का राज्य या रावण का राज्य बनाने का प्रसंग खड़ा होगा ? वहां तटस्थता कैसे उचित कही जा सकती है, "कोउ नृप होइ हमहिं का हानी" ऐसा बोलने वाली मन्थरा भी राम और भरत के मुकाबले में यह कह सकी थी। परन्तु अगर राम एवं रावण का प्रसंग आता तो उसे भी सोचना पड़ता कि यदि रामराजा होंगे तो गोहत्या बन्द होगी। धर्म एवं शास्त्र का घात रुकेगा। संस्कृति-नीति-भक्ति की सुरक्षा होगी। ठीक इसके विपरीत यदि रावण राजा होगा तो गोवध, शास्त्रवध और धर्मवध होगा। विविध धार्मिक, अध्यात्मिक उपासनाएँ एवं साधनाएँ संकट में पड़ जायेंगी। वस्तुतः शुद्ध धार्मिक व्यक्तिको भगवान् श्रीकृष्ण के शब्दों में स्पष्ट कहेगा—यस्तान् द्वेष्टि स मां द्वेष्टि यस्ताननु समामनु।" जो धर्म पक्ष का शत्रु है वह हमारा शत्रु है जो धर्म पक्ष का अनुयायी है वह हमारा अनुयायी है। आज कल की नकली उदारताकी नगण्यता श्री कृष्ण की उक्ति से व्यक्त हो जाती है। द्विषदन्नं न भोक्तव्यं द्विषन्तं नैव भोजयेत। पाण्डवान् द्विष से राजन् मम प्राणा हि पाण्डवाः यस्तान् द्वेष्टि समांद्वेष्टि यस्ताननु समामनु॥ दुर्योधन द्वारा निमन्त्रित किये जाने पर भगवान् ने कहा था राजन्! शत्रु का अन्न न खाना चाहिए, न शत्रु को खिलाना ही चाहिए। आप पाण्डवों से द्वेश करते हैं किन्तु पाण्डव मेरे प्राण तुल्य हैं। जो पाण्डवोंका दुश्मन है, वह मेरा दुश्मन है, जो प डवों का मित्र है, मेरा मित्र है।

सत्पुरुषों से निवेदन

कुछ लोग कहते हैं कि उपासना या ज्ञान तो मन की चीज है। सब कुछ गड़बड़ होने पर भी महात्मा या विद्वान को इन टंटों से दूर रह कर भजन ही करना चाहिए। ठीक है, परन्तु शस्त्र एवं धर्मस्थान नष्ट हो जाने पर विद्वानों या महात्माओं का शंडामर्क के तुल्य सरकारी करण हो जाने पर भजन करने का धार्मिक होने का मन भी कैसे बन सकेगा ? आखिर धार्मिक, अध्यात्मिक भाव

नाओं से ओत प्रोत मन भी तो शास्त्रों एवं सत्पुरुषों की कृपा से ही बनता है, बिना शास्त्रादि के वैसा मन भी नहीं बन सकता है। यदि प्रह्लाद ने भी यही सोचा होता कि चलो पिता से विवाद कौन करे ? मन में ही राम नाम जपते रहेंगे, ऊपर से पिता की ही बात मान लें, तो आज कोई राम नाम लेनेवाला रह सकता था ? परन्तु जब सच्चाई के साथ प्रह्लाद ने अपने जीवन को संकट में डाल कर भी सिद्धांत की रक्षा की, तभी संसार में सिद्धांत की स्थिरता रह सकी है।

इस तरह विद्वान् एवं महात्मा राजतन्त्र शासन में भी राजनीति में हस्तक्षेप करते थे, फ़िर अब तो जनतन्त्र शासन है। इस सिद्धांत के अनुसार तो शासन की सर्वोच्चसत्ता जनता में हीं निहित होती है। अतः वास्तविक राजा जनता ही होती है, अतः राजनीतिक दक्षता सम्पादन करना प्रत्येक व्यक्ति का परम कर्तव्य है, फिर तो जनता के धन एवं धर्म की रक्षा का उत्तरदायित्व जनता पर ही होता है। इसलिए जनता के प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य होता है कि वह उदारता, गम्भीरता और दक्षता के साथ राष्ट्र एवं धर्म का हिताहित देखकर कर्तव्य का निर्धारण एवं पालन करे। जहाँ न राजतन्त्र हो, न जनतन्त्र हो; किन्तु अधिनायक तन्त्र डिक्टेटरशिप हो, वहाँ पर तो विशिष्ट दक्ष राजनीतिज्ञ विद्वानों एवं महात्माओं के सिवा दूसरा कोई कुछ कर ही नहीं सकता है। जनता का संग्रह, उसे प्रोत्साहन देना एवं क्रान्ति के लिए उसे तैयार करना भी राजनीतिज्ञों के ही वश की बात है। ऐसे समय में धर्म एवं धर्मशास्त्रों की रक्षा के लिए विद्वानों को सामने आना पड़ता है। इसी अभिप्राय से कहा गया है कि—

स्थापयध्वमिमं मार्गं प्रयत्नेनापि हे द्विजाः।
स्थापिते वैदिके मार्गे सकलं सुस्थिरं भवेत्॥

विद्वानों को वैदिक धर्म की स्थापना के लिए सुदृढ़ प्रयत्न करना चाहिये। वैदिक धर्म के स्थिर होने पर सब कुछ स्थिर हो जायगा। यहीं यह भी कहा गया है कि जो समर्थ होने पर भी सर्व प्रकार से धर्म रक्षार्थ प्रयत्नशील नहीं होता, वह पाप का भागी होता है। माता पिता की, गुरुजनों की या जनता की धन-धर्म एवं प्राणों का विनाश हो रहा हो, कोई समर्थ पुरुष बैठे बैठे सब कुछ देखे, कुछ प्रयत्न न करे, यह प्रत्यक्ष ही पाप है:—

यश्च स्थापयितुं शक्तो नैवकुर्याद् विमोहितः।
तस्य हन्ता न पापीयानिति वेदान्तनिर्णयः॥

किन्तु जो समर्थ न होने पर भी यथा शक्ति धर्मशास्त्र-मर्यादा की रक्षा के लिये प्रयत्न करता है, वह उसी पुण्य के प्रभाव से सब पापों से मुक्त होकर सम्यक् ज्ञान का भागी होता है। अहिंसा, सत्य, अस्तेय ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह आदि यम कहे जाते हैं। यह निवृत्ति मार्गानुसारियों के लिए बड़े ही महत्व के हैं। शौच, संतोष, स्वाध्याय आदि में कुछ गड़बड़ी क्षम्य हो सकती है, परन्तु यम के सेवन में तो पूर्ण तत्परता होनी चाहिये। इसीलिए कहा गया है—**यमान् सेवेत सततं नियमान् मत्परः क्वचित्**, (श्रीमद्भागवत) यमों का सेवन सर्वदा ही करना चाहिए। नियमों में ज्ञातव्य न होने पर भी काम चल सकता है। अहिंसा आदि का अभिप्राय, है मनसा वाचा कर्मणा, प्राणिरक्षण करना, प्राणियों को पीड़ा न पहुंचाना। यही लोक रक्षण, प्राणि रक्षण, धर्म रक्षण राजनीत का मुख्य लक्ष्य है, यही क्षातत्राण है। इसी कारण महात्माओं की इन कार्यों में प्रवृत्ति होती थी। बालक वृद्धीय जैसे अरण्यवासी चाणक्य जैसे बाल ब्रह्मचारी समर्थ स्वामी जैसे निवृत्तिनिष्ठ लोग भी इस काम में संलग्न हुए कभी निष्फल नहीं होता। उसका अदृष्ट फल तो अवश्य ही प्राप्त हो जाता है, तभी तो भगवान् कृष्ण ने कहा था—

यःस्थापयि तुमुद्युक्तः श्रद्धयैवात्तमोऽपिसन् सर्वपापविनिर्मुक्तः सम्यक् ज्ञानमवाप्नुयात्। धर्म कार्य यतञ्छक्त्या नोचेत् प्राप्नोतिमानवः प्राप्तो भवति तत्पुण्यमत्र मे नास्ति संशयः॥ (म० भा० उद्योग० ६३।६) इन सब बातों से स्पष्ट हो जाता है कि वर्तमान दुख सर पर है जब कि जनता के धन धर्म पर संकट, उपस्थित हैं, विशिष्ट विद्वानों, महात्माओं तथा धार्मिक सद्गृहस्थों को भी राजनीति से न डरकर आगे आना चाहिये और धर्म रक्षण के लिये जो भी आवश्यक कार्य हो, करना चाहिये। परिणाम निश्चयेन शुभमङ्गलमय ही होगा। शिवमितिदिक्।

———